1960F Pandit Ghansyam Das

Shri Pandit Ghanshyam Das Ji (In Sanmati Sandesh, December 1960)

Also presented on the occasion of 75th Anniversary of the Mahaveer Vidyalaya Sadumar.

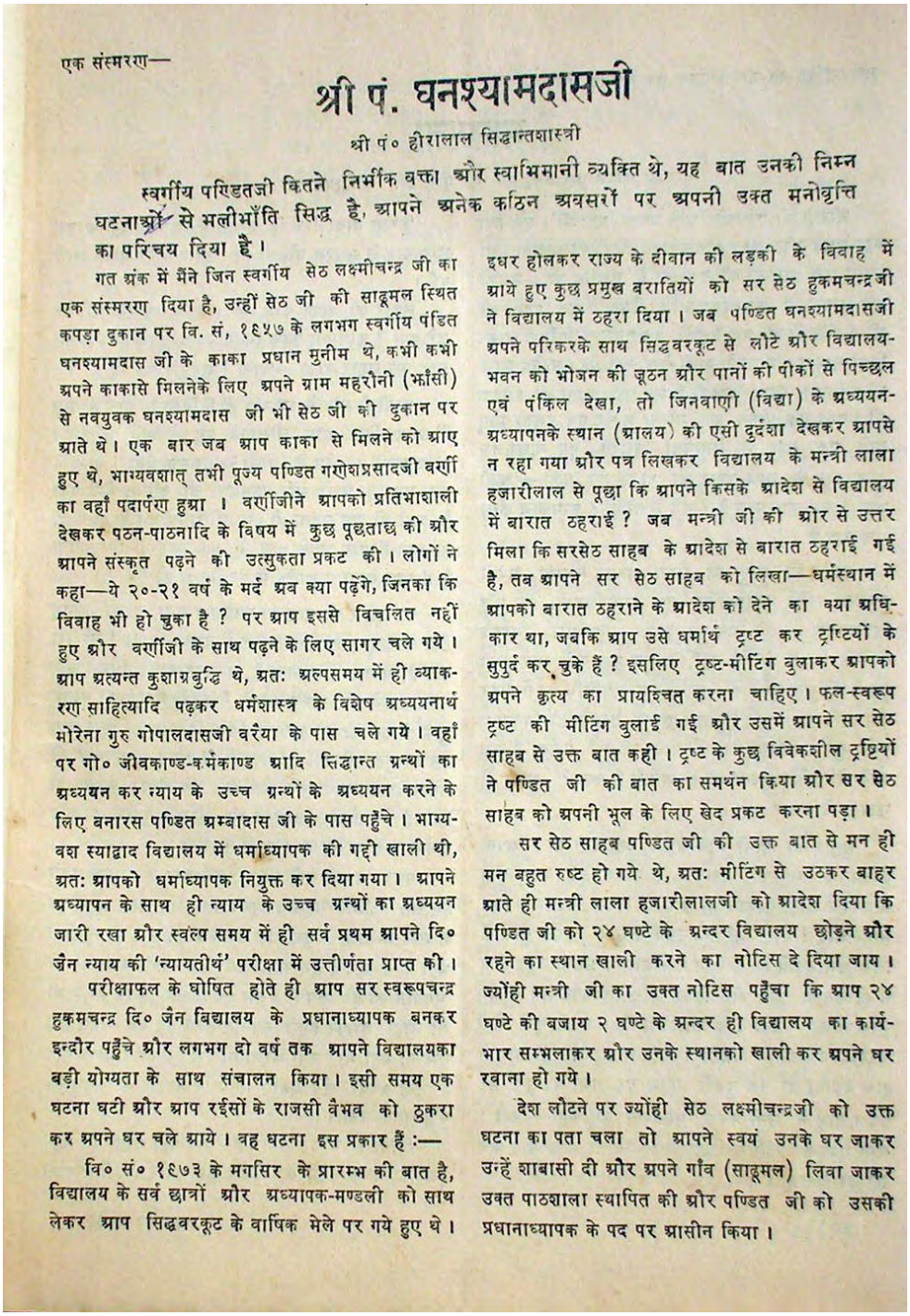

एक संस्मरण—

श्री पं. घनश्यामदासजी

श्री पं० हीरालाल सिद्धान्तशास्त्री

स्वर्गीय पण्डितजी कितने निर्भीक वक्ता और स्वाभिमानी व्यक्ति थे, यह बात उनकी निम्न घटनाओं से भलीभाँति सिद्ध है, आपने अनेक कठिन अवसरों पर अपनी उक्त मनोवृत्ति का परिचय दिया है।

गत अंक में मैंने जिन स्वर्गीय सेठ लक्ष्मीचन्द्र जी का एक संस्मरण दिया है, उन्हीं सेठ जी की साहूमल स्थित कपड़ा दुकान पर वि. सं, १९५७ के लगभग स्वर्गीय पंडित घनश्यामदास जी के काका प्रधान मुनीम थे, कभी कभी अपने काकासे मिलनेके लिए अपने ग्राम महरौनी (झाँसी) से नवयुवक घनश्यामदास जी भी सेठ जी की दुकान पर आते थे। एक बार जब आप काका से मिलने को आए हुए थे, भाग्यवशात् तभी पूज्य पण्डित गणेशप्रसादजी वर्णी का वहाँ पदार्पण हुआ। वर्णीजीने आपको प्रतिभाशाली देखकर पठन-पाठनादि के विषय में कुछ पूछताछ की और आपने संस्कृत पढ़ने की उत्सुकता प्रकट की। लोगों ने कहा—ये २०-२१ वर्ष के मर्द अब क्या पढ़ेंगे, जिनका कि विवाह भी हो चुका है ? पर आप इससे विचलित नहीं हुए और वर्णीजी के साथ पढ़ने के लिए सागर चले गये। आप अत्यन्त कुशाग्रबुद्धि थे, अतः अल्पसमय में ही व्याकरण साहित्यादि पढ़कर धर्मशास्त्र के विशेष अध्ययनार्थ मोरेना गुरु गोपालदासजी बरैया के पास चले गये। वहाँ पर गो० जीवकाण्ड-कर्मकाण्ड आदि सिद्धान्त ग्रन्थों का अध्ययन कर न्याय के उच्च ग्रन्थों के अध्ययन करने के लिए बनारस पण्डित अम्बादास जी के पास पहुँचे। भाग्यवश स्याद्वाद विद्यालय में धर्माध्यापक की गद्दी खाली थी, अतः आपको धर्माध्यापक नियुक्त कर दिया गया। आपने अध्यापन के साथ ही न्याय के उच्च ग्रन्थों का अध्ययन जारी रखा और स्वल्प समय में ही सर्व प्रथम आपने दि० जैन न्याय की 'न्यायतीर्थ' परीक्षा में उत्तीर्णता प्राप्त की।

परीक्षाफल के घोषित होते ही आप सर स्वरूपचन्द्र हुकमचन्द्र दि० जैन विद्यालय के प्रधानाध्यापक बनकर इन्दौर पहुँचे और लगभग दो वर्ष तक आपने विद्यालयका बड़ी योग्यता के साथ संचालन किया। इसी समय एक घटना घटी और आप रईसों के राजसी वैभव को ठुकरा कर अपने घर चले आये। वह घटना इस प्रकार हैं :—

वि० सं० १९७३ के मगसिर के प्रारम्भ की बात है, विद्यालय के सर्व छात्रों और अध्यापक-मण्डली को साथ लेकर आप सिद्धवरकूट के वार्षिक मेले पर गये हुए थे। इधर होलकर राज्य के दीवान की लड़की के विवाह में आये हुए कुछ प्रमुख बरातियों को सर सेठ हुकमचन्द्रजी ने विद्यालय में ठहरा दिया। जब पण्डित घनश्यामदासजी अपने परिकरके साथ सिद्धवरकूट से लौटे और विद्यालय-भवन को भोजन की जूठन और पानों की पीकों से पिच्छल एवं पंकिल देखा, तो जिनवाणी (विद्या) के अध्ययन-अध्यापनके स्थान (आलय) की ऐसी दुर्दशा देखकर आपसे न रहा गया और पत्र लिखकर विद्यालय के मन्त्री लाला हजारीलाल से पूछा कि आपने किसके आदेश से विद्यालय में बारात ठहराई ? जब मन्त्री जी की ओर से उत्तर मिला कि सरसेठ साहब के आदेश से बारात ठहराई गई है, तब आपने सर सेठ साहब को लिखा—धर्मस्थान में आपको बारात ठहराने के आदेश को देने का क्या अधिकार था, जबकि आप उसे धर्मार्थ ट्रष्ट कर ट्रष्टियों के सुपुर्द कर चुके हैं ? इसलिए ट्रष्ट-मीटिंग बुलाकर आपको अपने कृत्य का प्रायश्चित करना चाहिए। फल-स्वरूप ट्रष्ट की मीटिंग बुलाई गई और उसमें आपने सर सेठ साहब से उक्त बात कही। ट्रष्ट के कुछ विवेकशील ट्रष्टियों ने पण्डित जी की बात का समर्थन किया और सर सेठ साहब को अपनी भूल के लिए खेद प्रकट करना पड़ा।

सर सेठ साहब पण्डित जी की उक्त बात से मन ही मन बहुत रुष्ट हो गये थे, अतः मीटिंग से उठकर बाहर आते ही मन्त्री लाला हजारीलालजी को आदेश दिया कि पण्डित जी को २४ घण्टे के अन्दर विद्यालय छोड़ने और रहने का स्थान खाली करने का नोटिस दे दिया जाय। ज्योंही मन्त्री जी का उक्त नोटिस पहुँचा कि आप २४ घण्टे की बजाय २ घण्टे के अन्दर ही विद्यालय का कार्य-भार सम्भलाकर और उनके स्थानको खाली कर अपने घर रवाना हो गये।

देश लौटने पर ज्योंही सेठ लक्ष्मीचन्द्रजी को उक्त घटना का पता चला तो आपने स्वयं उनके घर जाकर उन्हें शाबासी दी और अपने गाँव (साहूमल) लिवा जाकर उक्त पाठशाला स्थापित की और पण्डित जी को उसकी प्रधानाध्यापक के पद पर आसीन किया।

.. incomplete

स्व० पं० घनश्यामदासजी न्यायतीर्थ का परिचय

(लेखक पं० हीरालाल सिद्धांत शास्त्री, ब्यावर)

आपका जन्म महरौनी (झांसी) में वि०सं०१९४५ के लगभग हुआ । आपने स्थानीय मिडिल स्कूल से हिन्दी मिडिल परीक्षा पास की । उन दिनों बमराना वाले सेठों के कपड़े की दुकान उनकी जमींदारी के ग्राम साढूमल में थी और उस पर पंडितजी के काका मुनीम थे । आप मिडिल की परीक्षा देकर साढूमल की दुकान पर काम सीखने के लिये रहने लगे । उस समय आपकी अवस्था २० वर्ष की थी । और विवाह हो चुका था । भाग्य से स्व०पूज्य गणेशप्रसादजी वर्णीजी महाराज का वहां आगमन हुआ । उस समय वे बड़े पंडितजी कहलाते थे । उन्होंने आपसे पूछा - भैया, पढना क्यों छोड दिया । उत्तर मिला - हमारे यहां आगे की पढाई का स्कूल नहीं है । वर्णीजी ने कहा - हमारे साथ सागर चलो और संस्कृत पढो । यह सुनकर वे अपने काकाकी ओर देखने लगे । क्योंकि आपके पिताजी का स्वर्गवास तो आपके बचपन में ही हो गया था । आपका सारा भार उन पर ही था । काकाने भी कुछ उत्तर देने से सकुचाये । उसी समय दुकान के मालिक स्व०सेठ लक्ष्मीचन्द्रजी भी बमराना से वर्णीजी को लिवाने के लिए आगये । वर्णीने उनसे कहा यहां आगे संस्कृत पढना चाहता है, यदि घर के लोगों के जीवन-निर्वाह की व्यवस्था हो जाय । उदारमना सेठजी ने तुरन्त कहा - जबतक ये पढना चाहें, इनकी पढाई का और घर वालों के निर्वाह का पूरा खर्चा मैं दूंगा । आप इन्हें अपने साथ सागर लिवा जाइये । बस, फिर क्या था, वर्णीजी इन्हें सागर ले गये और सत्तर्क सुधातरंगिणी पाठशाला में भर्ती कर दिया । जो अब भी गणेश दि० जैन संस्कृत महाविद्यालय के नाम से चालू है ।

आप छात्रों में सबसे अधिक उम्रवाले थे और कुशाग्र बुद्धि भी । अत: ३ वर्ष में ही विशारद और न्याय मध्यमा पास करली । तत्पश्चात् वर्णीजी ने आपको बनारस विद्यालय में भेज दिया । वहां रह कर आपने दो वर्ष में न्यायतीर्थ परीक्षा पास की । यहां यह ज्ञातव्य है कि दि०जैन समाज में आपने ही सर्व प्रथम न्यायतीर्थ की परीक्षा देकर उत्तीर्णता प्राप्त की थी ।

तत्पश्चात् गोम्मटसारादि सिद्धांत ग्रन्थों के अध्ययनार्थ आप जैन सिद्धांत विद्यालय मोरेनाचले आये । वहां पर आपने सिद्धांत ग्रन्थों का अध्ययन किया । आपकी स्मरण शक्ति इतनी तेज थी कि आपने गुरुजी (पं०गोपालदासजी) से गो० जीवकांड और कर्मकांड एक ही वर्ष में पढे । आपको दोनों की सारी (पौने दो हजार) गाथाएं कण्ठस्थ थीं । उस समय आपके साथियों में स्व०पं० देवकीनन्दनजी, स्व० पं० पन्नालालजी सोनी आदि प्रमुख थे ।

इसी समय बनारस विद्यालय में धर्माध्यापक का स्थान रिक्त हुआ और आप सन् १९१५ में धर्माध्यापक बनाकर बनारस बुला लिये गये । लगभग एक वर्ष के बाद ही

इन्दौर में सर सेठ हुकमीचन्दजी ने विद्यालय की स्थापना की । उसके लिए प्रधाना-ध्यापक की आवश्यकता पत्रों में प्रकाशित हुई । आप इन्दौर चले गये । लगभग दो वर्ष कार्य करने के पश्चात् एक घटना ऐसी घटी कि आप २ घंटे में ही वहां का कार्य छोड़ कर अपने घर चले आये ।

वह घटना इस प्रकार है - मगसर वदि १२ को इन्दौर स्टेट के तात्कालिक प्राइम मिनिस्टर की पुत्री का विवाह होने वाला था । उन्होंने बरातियों के ठहरने के लिए सर सेठ सा० से नशियां की धर्मशाला तो मांगी ही, साथ में बड़े सरदारों को ठहरने के लिए उन्होंने विद्यालय को भी मांगा। कार्तिक सुदि १५ से मगसिर वदि १२ तक ३ दिन सिद्धक्षेत्र सिद्धवरकूट का वार्षिक मेला होता था और प्रतिवर्ष १५-२० बड़े छात्र स्वयं सेक्क का कार्य करने को वहां जाते ही थे । अत: सर सेठ साहब ने मंत्री श्री हजारीलालजी से परामर्श कर सब अध्यापकों के साथ सब छात्रों को मेले पर भिजवा दिया और विद्यालय में प्रमुख बराती ठहरा दिये गये । जब मेले से सब छात्रों के साथ पं० घनश्यामदासजी लौटे और विद्यालय में गये, तब यत्र तत्र सर्वत्र कहीं पानकी पीकें, कहीं दाल, शाक आदि के फैलने के निशान सफाई के बाद भी उनकी दृष्टि में आये । उन्होंने नौकर से पूछा कि विद्यालय में यह गन्दगी क्यों है? नौकरने बताया कि बराती सरदार यहां पर ठहरे थे । पं०जी को यह बात बहुत खटकी कि सरस्वती पढ़ाने के धर्मस्थान में बरात ठहराई गई है । अत: उन्होंने तुरन्त पत्र लिखकर के मंत्री जी से पूछा कि विद्यालय में बरात किस के हुक्म से ठहराई गई ? मंत्रीजी का उत्तर आया - सर सेठ सा० के हुक्म से । पं०जी ने सर सेठ सा० को पत्र लिखकर पूछा कि आपको विद्यालय जैसे धर्मस्थान में बरात को ठहराने का क्या अधिकार है, जब कि यह एक धार्मिक एवं ट्रस्ट संस्था है ? आप इसका उत्तर दीजिये । साथ ही उन्होंने पारमार्थिक संस्थाओं के ट्रस्टियों को लिखा कि सर सेठ ने विद्यालय में बरात ठहराकर के एक धर्म-विरुद्ध कार्य किया है । अत: ट्रस्ट मीटिंग एवं कार्यकारिणी की मीटिंग बुलाकरके उनसे इसका उत्तर मांगा जावे । व उनका यह कार्य प्रायश्चित के योग्य है । ट्रस्टियों में नगर के दो प्रमुख व्यक्ति भी थे । उन्हें भी पंडितजी की बात जंची और उनके आग्रह पर मीटिंग बुलाई गई । पंडितजी ने मीटिंग में उक्त बात रखी और शहर के दोनों ट्रस्टियों ने उनकी बात का समर्थन और अनुमोदन किया । सर सेठ सा० ने जब देखा कि मामला उलझ गया है और पंडितजी के विरोध में मेरे भाई सेठ कस्तूरचन्दजी और कल्याणमलजी भी नहीं बोल रहे हैं, तब सर सेठ ने कहा - पंडितजी मेरे से भूल होगई, मैं माफी मांगता हूं । पंडितजी बोले - यह मेरी व्यक्तिगत बात नहीं है कि मैं माफी दे दूं । यह तो धार्मिक स्थान के अपमान का प्रश्न है, इसलिए आपको प्रायश्चित लेना पड़ेगा । बहुत देर तक दोनों ओर से कहा-सुनी होती रही । अन्त में किसी निर्णय पर पहुंचे बिना ही सर सेठ सा० उठ कर चल दिये । और मंत्रीजी को बाहर बुला कर कहा कि पंडितजी को २४ घंटे में विद्यालय छोड़ने का नोटिस दे दो । वह बात दिन के ३ बजे की है । मंत्रीजी ने

आफिस में पहुंच कर नोटिस लिखा कर के भेजा कि संस्था को आपकी सेवा की आवश्यकता नहीं है । अत: २४ घंटे में विद्यालय और रहने का मकान छोड देवें और इस नोटिस के साथ ही अग्रिम एक मास का वेतन भी भिजवा दिया । पंडितजी को यह नोटिस ४ बजे मिला । वे २ घंटे में ही अपना सामान बांधकर अपने परिवार के साथ शाम की ६ बजे उज्जैन में आने वाली गाडी से देश को चले आये ।

पाठक पंडितजी की निर्भीक स्पष्टवादिता और स्वाभिमानी मनोवृत्ति का इस घटना से ही परिचय पा जायेंगे । पंडितजी बहुत ही मनस्वी और स्पष्टवादी निर्भीक व्यक्तित्व के धनी थे । जब यह समाचार स्व०सेठ लक्ष्मीचन्दजी को मिला तो उन्होंने पंडितजी को बमराना बुलाया और उनकी पीठ को ठोकर कहा - शाबास, बुन्देलखण्ड का आपने नाम रखा । आप कोई चिन्ता न करें । आपका जो वेतन वहां मिलता था, वह आजसे ही यहां पर चालू किया जाता है यह कह कर और सादूमल में पाठशाला खोलने का अपना भाव प्रकट किया । चूंकि मगसिर में पाठशाला के लिए लडके मिलना सम्भव नहीं था, अत: पंडितजी को उन्होंने अपने पास ही रखा और उनसे सिद्धांत ग्रन्थों का स्वाध्याय करते रहे । अप्रैल में ज्यों ही सरकारी स्कूल के लडकों की परीक्षा समाप्त हुई, वैसे ही आपने सादूमल आकर मडावरा, सोरई, सैदपुर आदि समीपवर्ती गांवों में पाठशाला खोले जाने की सूचना भिजवाई । तदनुसार हम ग्राम के ६-७ लडकों के तथा मडावरा - सैदपुर आदि के भी ७-८ लडकोंके आने के साथ ही वि०सं० १९७४ के वैशाख सुदि २ के दिन पाठशाला का मुहूर्त कर दिया गया । मैं, मेरे ग्राम के साथी तथा मडावरा से स्व०गुलकारीलाल, (इस ग्रन्थ के प्रधान संपादक के पिता) मुन्नालाल आदि और सैदपुर से काशीप्रसाद आदि के आजाने पर पाठशाला का श्रीगणेश हो गया । तत्पश्चात् सिलावन से फूलचन्द, मालथान से किशोरीलाल आदि भी पढने के लिए आगये ।

पंडितजी की प्रेरणा से प्रथम वर्ष ही बनारस से एक व्याकरण-साहित्य के अध्यापक को तथा ललितपुर से स्व०बा०नाथूरामजी को अंग्रेजी और गणित के अध्यापक को बुला लिया गया । पंडितजी ने जिस तत्परता और शीघ्रता से हम लोगों को पढाया यह इसी से स्पष्ट है कि हम लोगों ने ६ वर्ष का कोर्स ४ वर्ष में ही पूरा कर लिया । आज हम और हमारे साथी पं० फूलचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्री आदि में जो कुछ योग्यता है, वह पंडितजी की कृपा का ही सुफल है ।

यहां यह लिखना अप्रासंगिक न होगा कि सेठ लक्ष्मीचन्द्रजी ने संस्था के छात्रों को अपना पुत्र-तुल्य स्नेह दिया । हर पर्व पर छात्र वा अध्यापक सेठजी के यहां ही मिष्टान्न भोजन दोनों समय करते थे । चूंकि सेठजी के कोई सन्तान नहीं थी, और एक पुत्र होकर पहले ही दिवंगत हो गया था, अत: सेठानीजी जरा चिन्तित रहा करती थीं, तब सेठजी भोजन करते समय उनसे कहा करते थे, लो तुम एक के लिए रोती थीं । तुम्हारे सौभाग्य से एक साथ २० पुत्र प्राप्त होगये । अपने एकाध होता, इधर बुलाते, वह उधर जाता । मगर ये सब कितने विनम्र, सुशील और योग्य लडके हैं । वैसे दोनों

समय प्रार्थना करके उनको भगवान का नाम सुनाते हैं, उन्हें अपना समझ कर खूब प्रेम से खिलाओ पिलाओ और पालो पोसो ।

जबतक सेठजी जीवित रहे, अपने बगीचे में हम सब को ले जाते और आमों के मौसम में आम और अमरूदों के मौसम में अमरूद भरपेट अपने साथ खिलाते । दूध दही तो प्राय: संस्था में पीते ही रहते थे । यह हमारे लोगों का दुर्भाग्य था कि सेठजी का यह स्नेह हम लोगों को ४ वर्ष ही मिल सका । वि०सं० १९७७ के सावन में उनका स्वर्गवास होगया । वे अपनी समस्त जायदाद का बारह आना हिस्सा संस्था को ट्रस्ट कर गये, उनके स्वर्गवास के पश्चात् पंडितजी का मन नहीं लगा । अत: वे स्वतन्त्र व्यवसाय के लिये सुरई चले गये । और हम तीन छात्र जिन्होंने उसी वर्ष विशारद और न्याय मध्यमा पास की थी, उन में से मैं इन्दौर चला गया । तथा पं० फूलचन्द्रजी और किशोरीलालजी मोरेना चले गये ।

यहां इतना लिखना भी जरूरी है कि सुरई में श्रीमन्त सेठ मोहललालजी ने वहां पाठशाला खोलने और उसमें पंडितजी से काम करने के लिए बहुत आग्रह किया और उनके इसी आग्रह पर वे सुरई गये थे । मगर उन्होंने नौकरी करने से सर्वथा इन्कार कर दिया । भला, जो व्यक्ति सर सेठ हुकमचन्द्रजी से टक्कर लेकर आया था, वह अन्यत्र कहां सर्विस कर सकता था । सेठ लक्ष्मीचन्द्रजी ने तो उन्हें पढाया था और अपने भाई समान मानकर अपने यहां रखा था । अन्त में श्रीमन्त सेठ सा० ने कहा कि व्यापार के लिये जितनी पूंजी की जरूरत हो, बिना ब्याज के मैं देता हूं, आप यहीं सुरई में रहकर व्यापार कीजिए और सायंकाल शास्त्र प्रवचन कर हमें अनुगृहीत कीजिये । उनके इस आग्रह को स्वीकार कर पंजी वहीं पर व्यापार करने लगे । यह समाज का दुर्भाग्य था कि तीन वर्ष पीछे ही सन् १९२४ के जून में पंडितजी का वहीं स्वर्गवास होगया ।

पंडितजी जहां प्रात:काल चार बजे हम लोगों को उठाकर पढने के लिए बैठाते, वहीं सामने आप भी स्वयं ग्रन्थों का अनुवाद करने को बैठजाते थे । उनकी इस प्रकृति और प्रवृत्ति का ही यह संस्कार हम लोगों पर पडा है कि आज भी हम और पं० फूलचन्द्रजी किसी न किसी ग्रन्थ का अनुवाद आदि करते ही रहते हैं । पंडितजी द्वारा अनुवादित ग्रन्थ इस प्रकार हैं :-

१. पांडव पुराण, २. परीक्षामुख, ३. नाममाला, ४. प्रद्युम्न चरित,
५. पद्मपुराण । इनमें से प्रारम्भ के ४ ग्रन्थ तो उनके ही सामने प्रकाशित होचुके थे । किन्तु पद्मपुराण इधर पंडितजी के और उधर उसके प्रकाशक पं०उदयलालजी काशलीवाल बम्बई के स्वर्गवास हो जाने से अप्रकाशित ही रह गया ।

यदि पंडितजी का असमय में स्वर्गवास न होता, तो न जाने, कितने ग्रन्थों का उनसे अनुवाद आदि हुआ होता और समाज को कितने ही कार्यों में नवीन मार्ग-दर्शन प्राप्त होता । पर यह समाज का दुर्भाग्य ही था कि ये मात्र ३६-३७ वर्ष की अवस्था में चले गये ।

पंडितजी की प्रथम पत्नी से एक पुत्री का जन्म हुआ, जो आज भी अपना सौभाग्यपूर्ण जीवन बिता रही है । उनके वि०सं० १९७५ के इन्फ्लूएंजा में दिवंगत हो जाने पर आपका विवाह महरोनी के ही प्रसिद्ध भायजी श्री बालचन्द्रजी की बहिन विदुषी तुलसाबाई के साथ हुआ । आपने पंडितजी के चिरवियोग का दु:सह दु:ख बडे धैर्य के साथ सहन किया और लगभग ४० वर्ष तक जैन कन्यापाठशालाओं में अध्यापन कराके रिटायर्ड होने पर अपना अन्तिम जीवन धर्मसाधन के साथ महरोनी (झांसी) में ही बिता रही हैं ।

स्वर्गीय पंडितजी के चरणों में शत शत वन्दन ।

.....